

भारतीय राष्ट्रीय
आंदोलन और
भोजपुरी का
प्रतिबंधित साहित्य

शुभनीत कौशिक

भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन
और
भोजपुरी का प्रतिबंधित साहित्य

शुभनीत कौशिक

अनुक्रम

भारत का स्वाधीनता संग्राम और प्रतिबंधित साहित्य	1
‘अब तौ एनकर राज भैया हमै न सोधाय हो’ : ‘वैद्य का बिरहा’	4
‘भारत माता तुमका सुमिरों, जिनकी महिमा अपरमपार’ : ‘राष्ट्रीय आल्हा’	12
‘करोँ स्वदेशी का परचार, तब होई स्वराज एक पलछन में’ : ‘सावन का स्वाधीनता’	17
‘अब तो गांधीजी महाराज दियो चर्खा मंत्र स्वराज’ : ‘स्वराज-गीत-गुनगान’	18
‘कैसी भइले तोरी गतीया हे भारत’ : ‘मोसीम बहार’	22
भोजपुरी की कुछ अन्य प्रतिबंधित पुस्तकें	24
महत्त्वपूर्ण संदर्भ-ग्रंथ	26

भारत का स्वाधीनता संग्राम और प्रतिबंधित साहित्य

भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन में साहित्य, पत्र-पत्रिकाओं और समाचारपत्रों की उल्लेखनीय भूमिका रही थी। उन्नीसवीं-बीसवीं सदी के के दौरान जहाँ एक ओर भारतीय बौद्धिक वर्ग ने प्रेस, समाचार-पत्र और पुस्तकों के ज़रिए औपनिवेशिक सरकार के शासन, भारतीयों के प्रति रवैये और उसकी नीतियों की आलोचना शुरू की। इसी क्रम में इन बुद्धिजीवियों ने अंग्रेज़ी राज की नीतियों के दुष्प्रभाव के प्रति अपने देशवासियों को सजग करने के प्रयास भी किए। वहीं दूसरी ओर, समाचारपत्रों, पत्रिकाओं और पुस्तकों के प्रकाशन में भारतीयों की सक्रियता और अंग्रेज़ी राज के लिए इसके गहरे निहितार्थों को समझते हुए ब्रिटिश राज ने उन्नीसवीं सदी के पूर्वार्ध से ही भारतीयों की प्रेस सम्बन्धी गतिविधियों पर अंकुश लगाना शुरू किया। वर्ष 1823 में ही भारतीय प्रेस को नियंत्रित करने के लिए लाया गया 'एडम्स रेगुलेशन' इसका ज्वलंत उदाहरण है।¹

सन सत्तावन के विद्रोह के ठीक दस साल बाद 1867 में भारतीय प्रेस अधिनियम बना, जिसमें भारत में छपने वाले समाचारपत्रों और प्रेस के नियमन के साथ ही ब्रिटिश भारत में छपी पुस्तकों की प्रतियों को सहेजकर रखने के प्रावधान भी शामिल थे। नियमन की इस प्रक्रिया में पुस्तकों, पत्रिकाओं को प्रतिबंधित करना भी शामिल था। इन प्रावधानों के मुताबिक प्रतिबंधित किया जाने वाला साहित्य मुख्यतः दो किस्म का था। पहली श्रेणी में ऐसा साहित्य था, जिसमें अंग्रेज़ी राज की मुखर आलोचना होती थी और दूसरा वह जिससे साम्प्रदायिक आधार पर

¹ रीतिका प्रसाद, "इम्प्रीमेटर एंड एडवर्सरी : प्रेस फ्रीडम एंड कॉलोनिअल गवर्नेंस इन इंडिया, 1780-1823", *मॉडर्न एशियन स्टडीज़*, 55 (2), मार्च 2021, पृ. 335-370.

समुदायों या धर्मों के भीतर विवाद पनपने का खतरा होता।² 1867 के उपर्युक्त प्रावधान के लागू होने के दशक भर बाद लॉर्ड लिटन द्वारा वर्नाक्यूलर प्रेस एक्ट (1878) लाया गया। भारतीय प्रेस के लिए इस एक्ट के प्रावधान इतने कड़े और दमनकारी थे कि इस एक्ट को 'गैगिंग एक्ट' तक कहा गया। हालाँकि चार साल के भीतर ही लॉर्ड रिपन द्वारा इस एक्ट को निरस्त कर दिया गया था, जिसका भारतीय राष्ट्रवादियों और समाचारपत्रों ने स्वागत किया था।

बीसवीं सदी के आरम्भ में अंग्रेज़ी राज ने भारत में प्रेस के नियंत्रण के लिए 1910 में भारतीय प्रेस अधिनियम बनाया। इस क़ानून में दिए प्रावधानों के अन्तर्गत ही बीसवीं सदी के पूर्वार्ध में अंग्रेज़ी राज द्वारा भारत में प्रकाशित पत्र-पत्रिकाओं एवं पुस्तकों को प्रतिबंधित किया गया। भारत में अंग्रेज़ी राज के दौरान कुल कितनी पुस्तकें प्रतिबंधित की गई होंगी, इसे लेकर विद्वानों में मतभेद है। ग्राहम शॉ और मैरी लायड के मुताबिक़ इंडिया ऑफ़िस लाइब्रेरी और डिपार्टमेंट ऑफ़ ओरियंटल मैनुस्क्रिप्ट्स एंड प्रिंटेड बुक्स के पास प्रतिबंधित साहित्य का जो संकलन है, उसमें कुल मिलाकर 1607 पुस्तक-पुस्तिकाएँ हैं। ये पुस्तकें असमिया, बांग्ला, बर्मी, गुजराती, हिंदी, कन्नड़, मलयालम, मराठी, ओड़िया, पंजाबी, पश्तो, सिंधी, तमिल, तेलुगु, उर्दू आदि भाषाओं की हैं। यह भी दिलचस्प है कि भारतीय भाषाओं में छपी इन किताबों के अलावा प्रतिबंधित पुस्तकों में से कुछ अंग्रेज़ी समेत दूसरी यूरोपीय भाषाओं में भी छपी थीं।

² ग्राहम शॉ व मैरी लॉयड (संपा.), *पब्लिकेशंस प्रोसेक्राइंड बाइ द गवर्नमेंट ऑफ़ इंडिया* (लंदन : ब्रिटिश लाइब्रेरी, 1985), भूमिका. साथ ही देखें, एन. जेराल्ड बैरियर, *बैंड : कंट्रोलर्सियल लिटरेचर एंड पॉलिटिकल कंट्रोल इन ब्रिटिश इंडिया, 1907-1947* (कोलम्बिया : यूनिवर्सिटी ऑफ़ मिसौरी प्रेस, 1974).

राष्ट्रीय आंदोलन के दौरान अन्य भारतीय भाषाओं की तरह ही भोजपुरी भाषा के कवियों और लेखकों ने भी न केवल राष्ट्रीय आंदोलन में बढ़-चढ़कर भागीदारी की, बल्कि अपनी कृतियों से राष्ट्रीय चेतना जागृत करने का काम भी बखूबी किया। अंग्रेजी राज ने राष्ट्रीय भावना जगाने वाले और स्वतंत्रता का आह्वान करने वाले ऐसे साहित्य व पत्र-पत्रिकाओं को प्रतिबंधित करने की नीति अपनाई। अचरज की बात नहीं कि बीसवीं सदी के पूर्वार्ध में भोजपुरी में लिखी गई ऐसी अनेक कृतियों को भी अंग्रेजी राज द्वारा प्रतिबंधित किया गया। उनमें से कुछ की चर्चा आगे विस्तार से की गई है।

‘अब तौ एनकर राज भैया हमै न सोधाय हो’ : ‘वैद्य का बिरहा’

अंग्रेजी राज द्वारा प्रतिबंधित की गई भोजपुरी की किताबों में से एक है ‘वैद्य का बिरहा’। पंडित रामकुमार वैद्य द्वारा लिखी यह किताब वर्ष 1940 में जौनपुर के केशव प्रेस से छपी थी। किताब के मुद्रक थे किशोरी शरण त्रिपाठी। इस पुस्तिका में रामकुमार वैद्य ने अपने भोजपुरी में लिखे राष्ट्रीय गीतों को प्रकाशित किया था। गौरतलब है कि इससे पूर्व वे ‘वैद्य की लाचारी’ नामक किताब भी लिख चुके थे। रामकुमार वैद्य जौनपुर के इजरी, जलालपुर के रहने वाले थे। एक आना मूल्य वाली इस पुस्तिका की कुल एक हजार प्रतियाँ तब छपी थीं, जो उस समय के लिहाज से एक बड़ी संख्या थी।

इस पुस्तिका में संकलित गीतों में अंग्रेजी राज के शोषक चरित्र को विस्तार से उजागर किया गया। ईस्ट इंडिया कम्पनी ने किस तरह एक व्यापारिक कम्पनी के रूप में भारत में प्रवेश किया और आगे चलकर कैसे उसने समूचे हिंदुस्तान पर अपना कब्जा जमा लिया, इसे बयान करते हुए रामकुमार वैद्य ने लिखा :

पहिले रोजगारी बनि आयेनि पाछे हमसे दगा कमायेनि,

येनहीं कइलेन तोहरा देशवा खुआर ॥ टेक ॥

बनि के सौदागर रोजगार करै आयेनि,

कांच वाली चूड़ी अपने देश से लिआयेनि ।

बेंचि बेंचि रुपया विलायत पठवायेनि

भोले भाले रजवन से बिनती सुनायेनि।

थोड़ी सी जमीन लेके घर बनवायेनि ॥ येनहीं० ॥

बनिके काल नेम के भाई, हमसे कइले दगा कमाई,

भीतर भीतरै बनावैं हथियार ॥³

इसी गीत में ईस्ट इंडिया कम्पनी के षड्यंत्र और मीर जाफ़र की गद्दारी के चलते पलासी के युद्ध (1757) में बंगाल के नवाब सिराजुद्दौला की पराजय और उसके बाद बक्सर के युद्ध (1764) में अवध के नवाब शुजाऊद्दौला, मुगल बादशाह शाह आलम द्वितीय और मीर कासिम की संयुक्त सेनाओं की पराजय का भी उल्लेख आता है। इस तरह अठारहवीं सदी के उत्तरार्ध में कम्पनी ने किस तरह अपने क्षेत्र का विस्तार किया और अपनी अधीनता वाले इलाक़े में कैसे किसानों, दस्तकारों, जुलाहों आदि का आर्थिक दोहन किया, इसे भी इस गीत में बयान किया गया। वारेन हेस्टिंग्स के समय नंद कुमार को दी गई फाँसी, जिसे 'न्यायिक हत्या' भी कहा जाता है, का जिक्र भी इस गीत में हुआ है। उन्नीसवीं सदी के मध्य में डलहौज़ी की हड़प नीति के ज़रिए ईस्ट इंडिया कम्पनी ने झाँसी, भरतपुर, नागपुर, सतारा जैसी रियासतों का कैसे जबरन विलय किया, इसे भी उपर्युक्त गीत में बख़ूबी दर्शाया गया है।

क्रानून के राज और प्रशासन के नाम पर कचहरी और तहसील, थाना और दारोगा, मुंशी-सिपाही, चौकीदार-पटवारी का जो समूचा शोषक तंत्र ईस्ट इंडिया कम्पनी ने खड़ा किया और जिसे बाद में अंग्रेज़ी राज ने न केवल जारी रखा बल्कि और भी जटिल व दमनकारी बनाया, उसकी निशानदेही भी इस गीत में हुई है। यही नहीं अंग्रेज़ी

³ रामकुमार वैद्य, *राष्ट्रीय गीत [वैद्य का बिरहा]* (जौनपुर : श्री केशव प्रेस, 1940), पृ. 2-3. [राष्ट्रीय अभिलेखागार]

राज द्वारा आम लोगों पर जो तमाम कर थोपे गए थे, और अमला, वकील, पेशकार के ज़रिए अदालतों में लोगों के शोषण की जो व्यवस्था खड़ी की गई थी, उसका हवाला भी इस गीत में मिलता है।

ज़िले ज़िले कचहरी औ तहसील कइलें जारी।

थाना औ सिपाही चौकीदार पटवारी।

मुंशी औ दारोगा से करावें ठगहारी

मुखिया बिचारे के बनावें सरकारी॥

आगे इस कविता में किसानों का आह्वान किया गया है कि वे उस अंग्रेज़ी राज के विरोध के लिए कमर कस लें, जिसकी वजह से उन्हें कभी खाने को पेट भर भोजन नहीं मिल पाता। खेती पर अंग्रेज़ी राज के दुष्प्रभाव की चर्चा करते हुए गीत में कहा गया कि ऐसे दुर्दिन आ गए हैं कि न तो खेती के लिए बैल मिलते हैं और न दूध दुहने के लिए गाय ही। अपना सब कुछ गँवाकर भी किसान लगान चुका पाने में सक्षम नहीं है। यह कविता किसानों को राष्ट्रीय नेतृत्व से भी सीधे जोड़ती है :

सरबस बेंचि के लगान न दियाय हो

सारी चीजों पर कर लागल जियरा डेराय हो

गांधी और जवाहर कइलेनि तोहरि सहाय हो

पंत के मनाव ओनकरि आयू बढि जाय हो

औपनिवेशिक काल में भारत से इंग्लैंड को धन के बहिर्गमन की जिस बात को दादाभाई नौरोजी, रमेश चंद्र दत्त, महादेव गोविंद रानाडे सरीखे अर्थशास्त्रियों ने अपनी रचनाओं और पुस्तकों में बखूबी व्यक्त किया था, उसे भी

सूत्र रूप में इन कविताओं में अभिव्यक्त किया गया है।⁴ उल्लेखनीय है कि हिंदी प्रदेश में भी महावीर प्रसाद द्विवेदी (सम्पत्तिशास्त्र), राधामोहन गोकुल, बालकृष्ण भट्ट, माधवराव सप्रे जैसे लेखकों ने अपने लेखों और पुस्तकों में अंग्रेजी राज द्वारा भारत के आर्थिक शोषण को बखूबी उजागर किया था। यह भी ध्यान में रखना चाहिए कि सखाराम गणेश देउसकर द्वारा बांग्ला में लिखी प्रसिद्ध पुस्तक ‘देशेर कथा’ (1904) का भी हिंदी अनुवाद हो चुका था। बाबूराव विष्णु पराडकर द्वारा किया गया यह अनुवाद ‘देश की बात’ शीर्षक से छपा था और उसे भी प्रतिबंधित किया गया।

अंग्रेजी राज ने भारत के प्राकृतिक और खनिज संसाधनों का जिस तरह दोहन किया, उसे शब्द देते हुए इस कविता में कहा गया है :

कहैं भारतीय रोय हमरा सरबस लेइ गै ढोय,

जबसे होइ गइलेनि बिदेशियन कइ राजा।

भारत क देशवा उजार कइके भइया,

लेइगे देवतन कइ बनावल सिर कइ ताजा।

गीत के अनुसार, इस दोहन के बदले में अंग्रेजी राज ने भारत को तीन चीजें थमा दीं, वे हैं — लंबरदारी, मुखियागिरी और राय साहबी। ‘राष्ट्रीय गीत’ में संकलित एक अन्य बिरहा में बताया गया कि भारत में बनी

⁴ आर्थिक राष्ट्रवादियों के विचारों के गहन विश्लेषण हेतु देखें, बिपन चंद्र, *द राइज एंड ग्रोथ ऑफ़ इकनॉमिक नैशनलिज़म इन इंडिया* (नई दिल्ली : पीपल्स पब्लिशिंग हाउस, 1966)।

चीजें एक वक्त दुनिया भर में निर्यात होती थीं, देश में किसी क्रिस्म की बेईमानी या चोरी नहीं थी। मगर अंग्रेजों ने सब कुछ तहस-नहस कर रख दिया। यह बिरहा इन शब्दों के साथ शुरू होता है :

सुंदर सुखद भारत भूमि हमरा देशवा रहलैं,

उहै आज हो गइलैं मुँहताज ॥

कहिया तोहरी मटिया बिलइहैं अंगरेजवा

देशवा फेर हमरा हो जइहैं आजाद॥

रामकुमार वैद्य द्वारा रचित यह बिरहा अपनी शुरुआती पंक्तियों से भोजपुरी के प्रसिद्ध कवि रघुवीर नारायण (1884-1955) की चर्चित रचना 'बटोहिया' की भी याद दिलाता है :

सुंदर सुभूमि भैया भारत के देसवा से मोरे प्रान बसे हिम-खोह रे बटोहिया॥

एक द्वार घेरे राम हिम-कोतवलवा से तीन द्वार सिंधु घहरावे रे बटोहिया॥

जाहु-जाहु भैया रे बटोही हिंद देखि आउ, जहवाँ कुहींकि कोइलि बोले रे बटोहिया॥

पवन सुगंध मंद अगर गगनवाँ से, कामिनी बिरह-राग गावे रे बटोहिया॥⁵

वर्ष 1909 में मार्ले-मिंटो सुधार के अन्तर्गत लागू की गई पृथक निर्वाचक मंडल की व्यवस्था और साम्प्रदायिक पंचाट जैसे प्रावधानों के ज़रिए अंग्रेजों ने कैसे भारत की आम जनता में, हिंदू-मुसलमान के बीच, फूट पैदा की और अंततः जनता के बीच विभाजन की खाई कैसे सोची-समझी रणनीति के अन्तर्गत बनाई गई, यह भी

⁵ दुर्गाशंकर प्रसाद सिंह, *भोजपुरी के कवि और काव्य* (पटना : बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद, 1958), पृ. 216-

रामकुमार वैद्य द्वारा रचित 'राष्ट्रीय गीत' में बखूबी अभिव्यक्त किया गया है। यही नहीं व्यंग्यात्मक लहजे में अंग्रेजों की तुलना उस बंदर से की गई है, जिसने दो बिल्लियों के बीच रोटी को लेकर हुई लड़ाई का फ़ायदा उठाकर उन्हें मूर्ख बनाया और खुद सारी रोटी खा गया।

लेइके तराजू अपुना बानर बनिके बइठें,

दोनो लड़ै बलि बनि गैलेनि बिलारा।

गौर करने की बात यह भी है कि प्रतिबंधित कर दी गई इस भोजपुरी कविता में प्राणिमात्र के समान अधिकार की धारणा की पुरजोर वकालत की गई है।

'राष्ट्रीय गीत' के एक अन्य बिरहा में भारतीयों को उनके पूर्वजों के पराक्रम और वीरता की याद दिलाई गई है। अंग्रेजों से संघर्ष के लिए आह्वान करते हुए इस गीत में राम, कृष्ण, हनुमान, परशुराम, अर्जुन, कर्ण से लेकर पृथ्वीराज चौहान, राणा सांगा, जयमल-फत्ता, राणा प्रताप तक का जिक्र किया गया है और भारतीयों से पूछा गया है कि उन्होंने अपना शौर्य कहाँ गँवा दिया है?

कहँवा गंववला अपने कांधे कै कमनियां भैया,

कहँवा गंवाय तू कृपाणा।

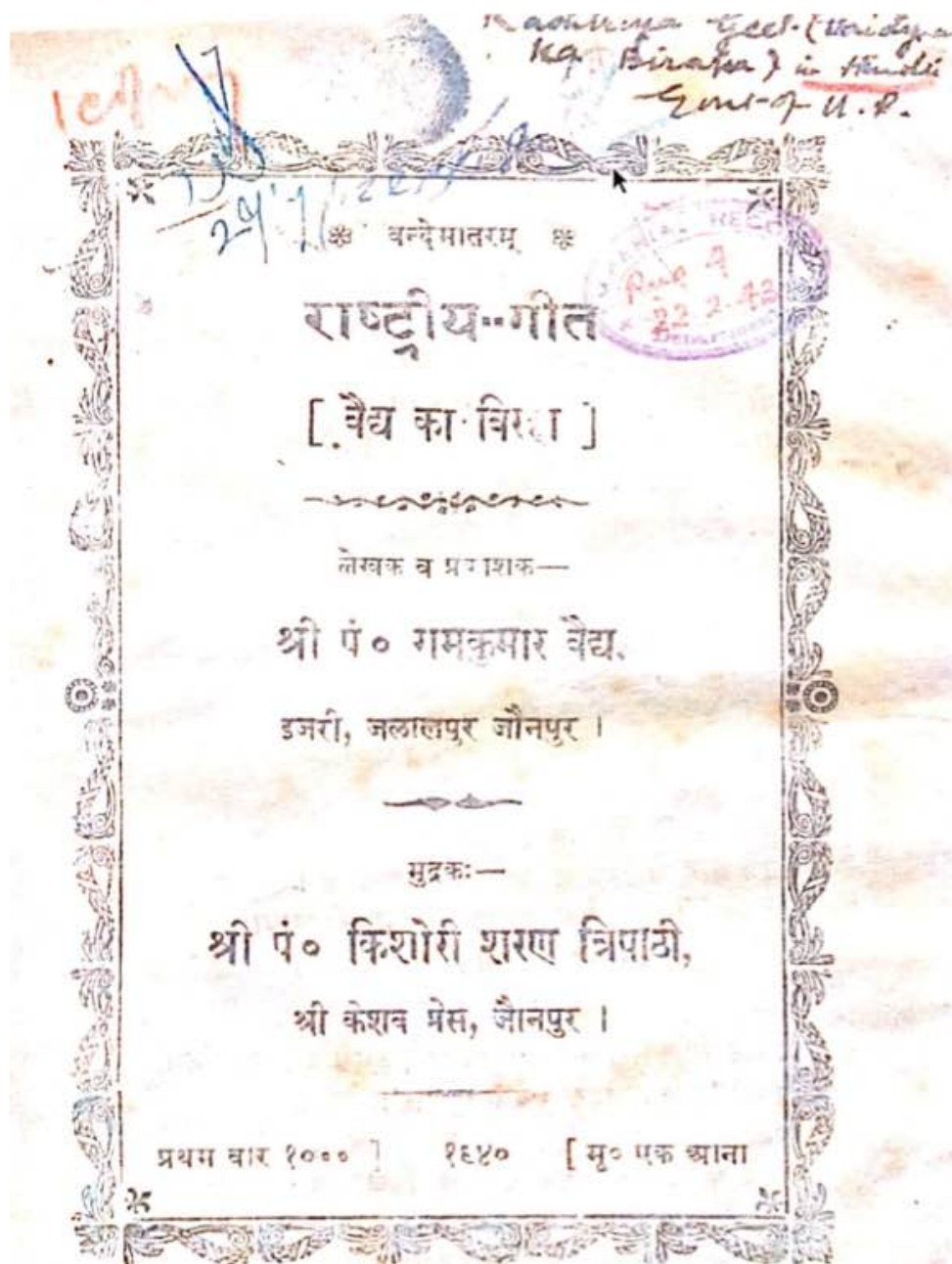
भारत कै बगिया विदेशिया उजारेनि,

तोहरे जियतै मेहरिया भइलीं राड़ा।

एक अन्य बिरहे में कहा गया कि कभी राजसूय और अश्वमेध यज्ञ करने वालों के पास अब खाने को भोजन नहीं है। विदेशी शासन को भारतीयों की वीरता और उनके पराक्रम का नाश करने वाला बताते हुए कवि ने लिखा

कि -

आपन रजवा विदेशियन के दिहल्या,
तब से खुंटाइ पर टांगलि बाय कमाना।



(साभार: राष्ट्रीय अभिलेखागार, नई दिल्ली)

‘भारत माता तुमका सुमिरों, जिनकी महिमा अपरमपार’ : ‘राष्ट्रीय आल्हा’

बलिया ज़िले के रसड़ा के रहने राजबली वर्मा ने आल्हा-उदल की लोकगाथा को आधार बनाकर एक राष्ट्रीय काव्य भोजपुरी में लिखा। ‘राष्ट्रीय आल्हा’ शीर्षक से प्रकाशित उनकी पुस्तक का पहला भाग आजमगढ़ से मार्च 1931 में छपा। जिसे अंग्रेज़ी राज द्वारा प्रतिबंधित कर दिया गया। बता दें कि इस किताब के पहले संस्करण की कुल एक हजार प्रतियाँ छपी थीं। बलिया ज़िले में स्थित अपने गाँव के नगेंद्र पुस्तकालय में उपलब्ध राष्ट्रीय साहित्य को पढ़ते हुए राजबली वर्मा का जुड़ाव राष्ट्रीय आंदोलन से हुआ और वे भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के सम्पर्क में आए। आल्हा के रूप में राष्ट्रीय गीतों की यह पुस्तक लिखने की प्रेरणा उन्हें कैसे मिली, इसके बारे में वे लिखते हैं :

मुझे यह शौक हुआ कि वर्तमान आंदोलन के सम्बन्ध में कुछ कविता कर देश-सेवा करूँ। मैं सबल सिंह चौहान का बनाया आल्हा बड़े प्रेम से पढ़ता था। अतः मैंने यही तै किया कि आल्हा छन्द में ही कविता करूँ। जिसका प्रतिफल यह है कि अपने भाइयों के सामने यह आल्हा बना कर उपस्थित किया है।⁶

राष्ट्रीय आल्हा की सुमिरनी में रामचंद्र, हनुमान के साथ ही भारत माता का भी सुमिरन किया गया है। इसी क्रम में, शिवाजी, राणा प्रताप, झाँसी की रानी, कुँवर सिंह, तात्या टोपे, लाजपत राय, गोपाल कृष्ण गोखले, देशबंधु चितरंजन दास, शहीद भगत सिंह, राजा महेंद्र प्रताप आदि को भी याद किया गया है।

⁶ राजबली वर्मा, *राष्ट्रीय आल्हा*, पहला भाग (आजमगढ़ : विश्वनाथ प्रेस, 1931), निवेदन. [राष्ट्रीय अभिलेखागार]

हिंदुस्तान की वर्तमान दशा को बयान करते हुए यह भी कहा गया कि अंग्रेजी राज (जिसे आल्हा में 'अधर्मी राज' कहा गया है) के चलते ज्ञान-धर्म का नाश हो गया है और भारतीयों की वीरता और उनकी समृद्धि को नष्ट कर दिया गया है। अंग्रेजी राज में लाखों हिंदुस्तानी अकालों के दौरान भुखमरी के शिकार हुए, हजारों देश की आजादी के लिए अंग्रेजों से संघर्ष करते हुए जेलों में ठूस दिए गए या उन्हें देशनिकाला दे दिया गया, कितनों को ही कालापानी की सजा हुई या फाँसी के तख्त पर चढ़कर वे मातृभूमि के लिए कुर्बान हो गए। अंग्रेजों द्वारा भारत के आर्थिक दोहन और भारतीयों पर थोपे गए मनमाने करों के बारे में आल्हा में कहा गया कि :

7 कोटि नीमक कर लेवे, 37 कोटि ज़मीन लगाना

25 कोटि गाँजा अफ़ीम में लै 10 कोटि शराब दुकान॥ (पृ. 7)

वर्ष 1930 में महात्मा गांधी द्वारा शुरू किए गए नमक सत्याग्रह का प्रभाव इस आल्हा पर स्पष्ट है। चूँकि यह पुस्तिका ऐसे समय में लिखी गई थी, जब देश में सविनय अवज्ञा आंदोलन चल रहा था। इसलिए इसमें तत्कालीन परिस्थितियों का बड़ा ही सजीव वर्णन हुआ है। गीत के आरम्भ में ही महात्मा गांधी के चमत्कारी प्रभाव के बारे में कहा गया है कि :

देश व कोस विदेशन में, अब गांधी सों वीर लखाय प़ै ना।

जिनके समुहे पर हाकिम के, तलवाल व तोप भी काम करे ना॥⁷

⁷ एक अन्य गीत में गांधी के चमत्कारी प्रभाव का हाल बताते हुए कहा गया कि :

जेतने गोले गोली कुछ नहीं है बिलकुल हैं बेकार।

चर्खा मेरा देख रहा है सात समुद्र पारा।

एक अन्य स्थान पर गांधी को भारतीयों की पीड़ा को दूर करने वाला बताते हुए कहा गया है :

जन्म लिया रघुनन्दन ने, गांधी जाँहि को संसारा

जिनके हांक सुनत जग काँपै, भय से विलायत हिल जाया

वही तुम्हारी पीड़ा हरिहैं, दूसर नहिं वीर संसारा।⁸

महात्मा गांधी द्वारा वाइसराय लॉर्ड इरविन को दी गई चेतावनी और फिर इरविन के न मानने पर नमक सत्याग्रह शुरू करने का भी विस्तार से आल्हा में वर्णन किया गया है। गांधी द्वारा दांडी मार्च शुरू करने, नमक क़ानून तोड़ने और फलस्वरूप देश भर में सविनय अवज्ञा आंदोलन के माध्यम से हिंदुस्तानियों के उठ खड़े होने का जीवंत वर्णन भी आल्हा में हुआ है :

जेहि जेहि रास्ते चलैं बहादुर, धरती दहल दहल रहि जाया

बिगुल बजावत ध्वजा उड़ावत, होता गान मातरम क्यारा।

पाँच मील पर खेमा गिरता, लेक्चर होत दिना अरु राति।

पाँचे दिनवा के बीतल पर, एक लाख होइ गयो तयारा। (पृ. 11)

मुठ्ठी में नमक लेकर गांधी द्वारा नमक क़ानून तोड़ने के बाद देशभर में आग की लपट की तरह सत्याग्रह का जो प्रसार हुआ, उसे भी आल्हा में अभिव्यक्त किया गया है। यही नहीं गांधी की गिरफ़्तारी के बाद सरोजिनी नायडू

⁸ महात्मा गांधी से जुड़ी ऐसी ही किंवदंतियों और विश्वासों के ऐतिहासिक विश्लेषण हेतु देखें, शाहिद अमीन, 'गांधी एज़ महात्मा : गोरखपुर डिस्ट्रिक्ट, ईस्टर्न यूपी, 1921-22', रणजीत गुहा (संपा.), *सबाल्टर्न स्टडीज़*, खंड 3 (दिल्ली : ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 1984).

के नेतृत्व में मई 1930 में धरसाना में जो नमक सत्याग्रह हुआ, उसका भी बड़ा मर्मस्पर्शी विवरण इस पुस्तिका में मिलता है। सरोजिनी नायडू के साहस, उनके शौर्य और अद्वितीय पराक्रम के हवाले से आल्हा में कहा गया है :

कि जइसन नाव सुना सिरोजन का, वइसय देखों नयन पसारा

जब तक जीवै सिरोजनी माता, तब तक कौन पड़ी परवाहा।

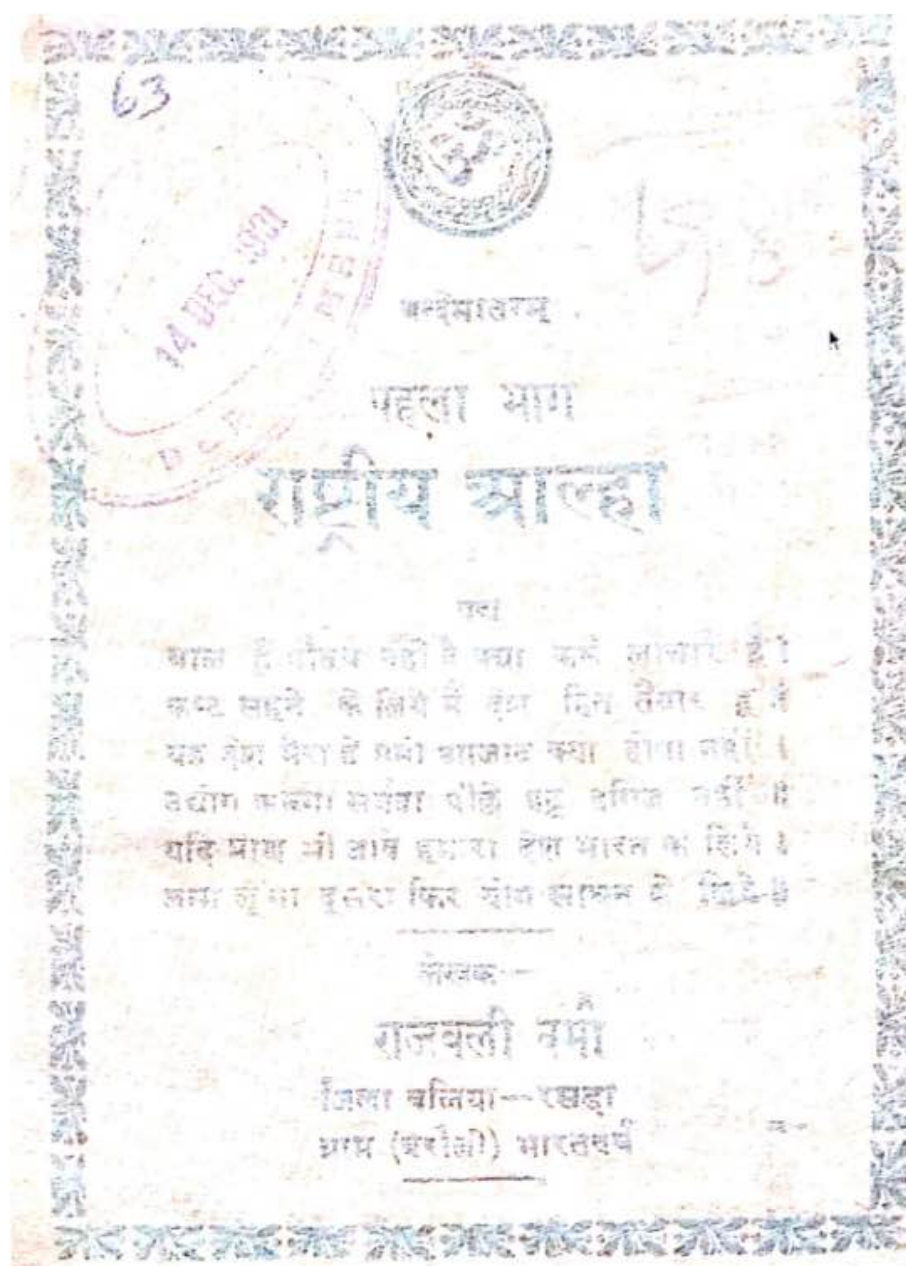
जवन काम को गांधी ना कइलन उ कइ देली सरोजिनी माया। (पृ. 31)

कुछ स्थानों पर आल्हा में हिंदू अस्मिता पर भी ख़ास ज़ोर दिया गया है। यही नहीं अतीत के जिन ऐतिहासिक या मिथकीय नायक-नायिकाओं की चर्चा भी इन गीतों में बार-बार हुई है, वे भी बग़ैर किसी अपवाद के हिंदू ही हैं। मसलन, एक जगह पर आल्हा में कहा गया है :

हिन्द बश सबही हिंदू है वंशज सभी प्रताप जी क्यार

सबको खून खौलो गयो हिय में, देखि देखि आज न्याय अन्याय।

जब तक नहिं स्वतन्त्र सब होइहन, नहिं देहिके आग बुझाय।



(साभार: राष्ट्रीय अभिलेखागार, नई दिल्ली)

‘करोँ स्वदेशी का परचार, तब होई स्वराज एक पलछन में’ : ‘सावन का स्वाधीनता’

बनारस से 1930 में छपे ‘सावन का स्वाधीनता’ शीर्षक वाले पैफलेट को प्रकाशित किया था रामचंद्र सराफ और नंदन साव ने। इस पैफलेट में ‘सावन का स्वाधीनता’ शीर्षक से एक कजरी छापी गई थी। पैफलेट का मुद्रण बनारस के दारानगर स्थित श्री वागेश्वरी प्रेस ने किया था। यह पैफलेट भी ब्रिटिश सरकार द्वारा जब्त कर लिया गया।

इस पैफलेट में छपी कजरी में अंग्रेजी राज द्वारा भारत के आर्थिक शोषण और धन के बहिर्गमन का वर्णन किया गया है। साथ ही, हिंदुस्तानियों से विदेशी वस्तुओं के बहिष्कार और स्वदेशी का प्रयोग करने का आह्वान करते हुए अंग्रेजी राज से असहयोग करने की बात भी कही गई है।

इस प्रतिबंधित कजरी में अंग्रेजों के प्रति निष्ठा दशानि वाले उन भारतीयों को आड़े हाथों लिया गया है, जो निजी स्वार्थों और ‘राय साहब’ जैसी उपाधियों के लालच में अंग्रेजों के स्वामिभक्त बने हुए थे। स्वराज हासिल करने के लिए चरखा, अहिंसा, स्वदेशी के महत्त्व को भी इस कजरी में रेखांकित किया गया है।⁹

⁹ महादेव सराफ व नंदन साव, *सावन का स्वाधीनता* (बनारस सिटी : वागेश्वरी प्रेस, 1930). [राष्ट्रीय अभिलेखागार]

‘अब तो गांधीजी महाराज दियो चर्खा मंत्र स्वराज’ : ‘स्वराज-गीत-गुनगान’

यह पुस्तिका वर्ष 1931 में मुरादपुर (पटना) स्थित सेंट्रल प्रिंटिंग प्रेस से छपी थी, जिसे प्रतिबंधित कर दिया गया। मुजफ्फरपुर के रहने वाले काली प्रसाद महादेवलाल द्वारा प्रकाशित इस किताब में कई राष्ट्रीय गीत संकलित

थे, जिनमें कुछ भोजपुरी के गीत भी थे। किताब के पहले संस्करण की कुल दो हजार प्रतियाँ छपी थीं।

इस किताब में संकलित गीतों में एक नशे के दुष्प्रभाव के बारे में है। शराब, ताड़ी जैसे नशीले पदार्थों के सेवन के बाद शराबी व्यक्ति किस प्रकार परिवार और समाज को नुकसान पहुँचाता है, इसका विस्तार से वर्णन

‘नीसेबजबा’ [नशेबाज] शीर्षक वाली कविता में हुआ है।

नशेबाज व्यक्ति कैसे अपने ही परिवार की महिलाओं को अपमानित करते हैं, यहाँ-वहाँ लोगों से झगड़ा करते

हैं, इसका वर्णन भी कविता में बखूबी किया गया है। साथ ही, नशीले पदार्थों की बिक्री को बढ़ावा देने वाली

अंग्रेजी राज की आबकारी नीति की भी इस कविता में आलोचना की गई है। कविता में वर्णन किया गया है कि

नशीले पदार्थों की बिक्री को रोकने के लिए लोग शराब की दुकानों के आगे धरने पर बैठते हैं, पुलिस की

लाठियाँ खाते हैं और जेल भी जाते हैं, मगर इस सबके बावजूद नशेबाज व्यक्ति अपनी हरकतों से बाज नहीं

आता। इसे लेकर कविता में नशेबाजों के प्रति गहरा आक्रोश प्रकट हुआ है। प्रासंगिक है कि नशेबंदी और मद्य-

निषेध को लेकर कथाकार प्रेमचंद ने भी ‘मैकू’ शीर्षक से एक कहानी लिखी थी, जो काफ़ी चर्चित रही।

उल्लेखनीय है कि नशेबाज का चरित्र-चित्रण करते समय जाति और छुआछूत सम्बन्धी पूर्वाग्रह भी कविता में

कहीं-कहीं दिखते हैं। मसलन, कविता में एक जगह कहा गया है कि नशेबाज व्यक्ति दारू के अड्डे पर बैठकर

उसी गिलास में शराब और ताड़ी पीता है, जिसमें डोम और हलखोर [हलालखोर?] शराब पीते हैं। इस तरह

नशेबाज व्यक्ति धन तो गँवाता ही है अपनी जाति भी गँवा बैठता है! कहना न होगा कि नशे का विरोध करते हुए भी इस तरह की कविताओं में जाति सम्बन्धी पूर्वाग्रह प्रकट हुए हैं :

मुसलमान तो हराम कहे हिंदू कहे पपा पियते अधरम करावे नीसेबजबा।

गाँजा वो शराब तारी धन बरबाद करे जात भी गमावे कहावे नीसेबजबा।

गिलसवा में जै डोमहलखोर पीए वोही तु गिलसवा में पीए नीसेबजबा।¹⁰

एक अन्य किताब में संकलित गीत में भी नशेबाजों पर लिखते हुए कवि का जाति सम्बन्धी पूर्वाग्रह झलकता है। इन गीतों में शराब को लेकर एक असहजता इसलिए भी है क्योंकि इनके लिखने वालों के अनुसार शराब की एक बुराई यह भी है कि वह जातिभेद और छुआछूत के बंधनों को तोड़ देती है, पीने वालों को जातिभ्रष्ट कर देती है :

छुत है हिन्दू क्रौम के अन्दर पीने वाले खासे बन्दर, दरुआ में

सब छुत है सुन्दर पीयन चमारा रे पिअकड़ा।।

छुआ छुत में हिन्दू भाई नौआ धोबी और कसाई, सब कोई

पीकर जात गमाई मनवा कर बिचारा रे पिअकड़ा।।¹¹

पंजाब में आम जनता पर पुलिसिया कहर और अंग्रेजी राज के अत्याचारों का उल्लेख भी इन कविताओं में प्रमुखता से हुआ है। इन कविताओं में यह बात लक्षित की गई कि सेना, पुलिस और रेलवे जैसे महकमों में भी

¹⁰ काली प्रसाद व महादेव लाल, *स्वराज-गीत-गुनगान* (पटना : सेंट्रल प्रिंटिंग प्रेस, 1931). [राष्ट्रीय अभिलेखागार]

¹¹ राजेंद्र प्रसाद, *मोसीम बहार* (मुजफ्फरपुर : बिहार स्टैंडर्ड प्रेस, 1931), पृ. 2. [राष्ट्रीय अभिलेखागार]

बड़ी तादाद में हिंदुस्तानी हैं। मगर दुर्भाग्य यह है कि अपने ही देशवासियों का शोषण करने में ये हिंदुस्तानी भी अंग्रेज़ अधिकारियों से किसी मामले में कम नहीं हैं। यही नहीं ज़मींदार और महाजन तो सभी हिंदुस्तानी ही हैं, मगर वे भी हिंदुस्तानियों का शोषण करने से बाज नहीं आते। साथ ही, इस कविता में मैनचेस्टर और लंकाशायर की फैक्टरियों में बने कपड़ों के बहिष्कार और उनकी जगह खदर अपनाने का आह्वान भी किया गया।

11

2577

स्वराज-गीत-गुनगान ।

प्रकाशक—

काली प्रसाद, महादेवलाल ।

सीधारा मोजफरपुर ।

वजरंग सहाय सिंह,

मैनेजर द्वारा

सेन्द्रल प्रिन्टिङ्ग प्रेस, मुरादपुर, पटनासे
मुद्रित ।

प्रथमवार २००० ।

मुल्य २

दिना मोहर की किताब खोरी की समझी जायगी ।

(साभार: राष्ट्रीय अभिलेखागार, नई दिल्ली)

‘कैसी भइले तोरी गतीया हे भारत’ : ‘मोसीम बहार’

1931 में मुजफ्फरपुर से छपी इस पुस्तिका में हिंदी और भोजपुरी में लिखे राष्ट्रीय गीत शामिल थे। इस संकलन को तैयार किया था राजेंद्र प्रसाद ने। इसमें होली, चैत, दादरा, गजल आदि की तर्ज पर लिखे अनेक राष्ट्रीय गीत शामिल थे। इस पुस्तिका के आरम्भ में एक गीत शराब सरीखे नशीले पदार्थों के दुष्प्रभावों के बारे में था, जिसका शीर्षक ही है ‘पिअकड़ा’। नशेबाज व्यक्ति किस तरह शराब के फेर में पड़कर अपनी उल्टी-सीधी हरकतों से अपने मान-सम्मान को गँवा बैठता है और परिवार व समाज की नज़रों से उतर जाता है, इसका वर्णन इस गीत में हुआ है।

पुस्तिका में संकलित एक अन्य गीत में अली बंधुओं (मौलाना शौक़त अली व मोहम्मद अली) और महात्मा गांधी द्वारा आज़ादी की लड़ाई में भारतीयों के आह्वान की याद दिलाते हुए भारतीयों से समय रहते चेत जाने और जागने की पुकार की गई है। गीत में स्वदेशी और खादी पर भी ज़ोर दिया गया है। इसी गीत में एक स्त्री अपने पति से कहती है ‘मत लइओ चुनरिया हमार विदेशी हो बालमा।’

इसी क्रम में एक अन्य गीत में भारत से धन के बहिर्गमन, औपनिवेशिक शासन के परिणामस्वरूप भारत में धन, बल और ज्ञान की हानि का भी विस्तार से वर्णन किया गया है। उपर्युक्त गीत में सूत कातने, अदालतों की बजाय पंचायतों की शरण लेने और राष्ट्रीय शिक्षा पर ज़ोर दिया गया है। एक दूसरे गीत में अंग्रेज़ी राज के रवैये की तुलना नादिरशाही से की गई है। गीत के मुताबिक अंग्रेज़ों के ऐसे नादिरशाही कृत्यों में शामिल है - भारतीयों की स्वराज्य की माँग पर तनिक भी ध्यान न देना, राष्ट्रवादी नेताओं पर लाठियाँ चलवाना, आम लोगों पर कोड़े बरसाना और पंजाब में निरीह जनता पर पुलिसिया अत्याचार करना।

565

॥ मोसीम बहार ॥



॥ श्री: मणेशायम् ॥



संग्रह करता श्री प्रकाशक राजप्रन्दर प्रसाद सरैया गंज
मुजफ्फरपुर ।

(साभार: राष्ट्रीय अभिलेखागार, नई दिल्ली)

पिछले अध्यायों में वर्णित पुस्तिकाओं के अलावा भोजपुरी की कुछ अन्य प्रतिबंधित पुस्तकों का विवरण इस प्रकार है :

1. ‘असहयोग’ : वर्ष 1920 में असहयोग आंदोलन के दौरान बिदेश्वरी प्रसाद मालवीय ने राष्ट्रीय गीतों की एक पुस्तक संपादित की, शीर्षक था ‘असहयोग’।¹² बनारस से छपी यह किताब ‘असहयोग माला’ के अंतर्गत छपी थी। इसमें छात्रों, किसानों, चरखे से जुड़े गीत शामिल थे, जिनमें कुछ भोजपुरी भाषा में भी थे। इसे अंग्रेज सरकार द्वारा प्रतिबंधित कर दिया गया।
2. ‘फिरंगिया’ : असहयोग आंदोलन के दौरान ही 1921 में गंगामहेश शुक्ल ने ‘फिरंगिया’ शीर्षक से एक पुस्तिका प्रकाशित की।¹³ जिसमें हिंदी और भोजपुरी में लिखे राष्ट्रीय गीत शामिल थे, जो ब्रिटिश दमनकारी नीति की आलोचना करते हुए लिखे गए थे। यह किताब फर्रुखाबाद से श्रीप्रसाद माहेश्वरी द्वारा मुद्रित की गई थी। यह पुस्तक भी प्रतिबंधित कर दी गई।

उपर्युक्त उदाहरणों से स्पष्ट है कि राष्ट्रीय आंदोलन के दौरान अंग्रेजी राज द्वारा प्रतिबंधित किए गए भोजपुरी साहित्य में राष्ट्रीयता की भावना देखने योग्य है। बलिया, मुजफ्फरपुर, बनारस, जौनपुर जैसी जगहों से छपी ये किताबें भोजपुरीभाषी इलाक़े में राष्ट्रीय आंदोलन के प्रसार और इस क्षेत्र के लोगों के राष्ट्रवादी तेवर की बानगी देती हैं।

¹² ग्राहम शॉ व मैरी लॉयड (संपा.), *पब्लिकेशंस प्रोसक्राइंड बाइ द गवर्नमेंट ऑफ़ इंडिया*, पृ. 72.

¹³ वही, पृ. 98.

बीसवीं सदी के पूर्वार्ध में छपी भोजपुरी की इन पुस्तिकाओं में अंग्रेज़ी राज के शोषक चरित्र को बखूबी उजागर किया गया है। साथ ही, भारत से धन के बहिर्गमन की चर्चा भी इन गीतों में हुई है, जिसके बारे में नौरोजी, महादेव गोविंद रानाडे सरीखे राष्ट्रवादी नेता अपनी चर्चित कृतियों में विस्तार से लिख चुके थे। निश्चित ही भोजपुरी की इन प्रतिबंधित पुस्तिकाओं में संकलित गीतों ने आर्थिक राष्ट्रवाद से जुड़े उन गम्भीर और जटिल विचारों को आम जनता तक ले जाने का काम बड़ी प्रतिबद्धता के साथ और सहजता से किया, जिसका खामियाजा इन पुस्तिकाओं को अंग्रेज़ी राज द्वारा प्रतिबंधित किए जाने के रूप में उठाना पड़ा।

साथ ही, इन गीतों में सविनय अवज्ञा आंदोलन के दौरान देश भर में नमक क़ानून के उल्लंघन, अंग्रेज़ों के अत्याचार और पुलिसिया दमन का वर्णन भी हुआ है। जहाँ एक ओर इन गीतों में स्वदेशी, खादी, राष्ट्रीय शिक्षा की बात कही गई है, वहीं दूसरी ओर इनमें विदेशी वस्तुओं के बहिष्कार पर भी ज़ोर दिया गया है। शराब जैसे नशीले पदार्थों के सेवन से समाज पर पड़ने वाले बुरे असर की चर्चा भी इन गीतों में हुई है। इन पुस्तिकाओं की अपनी सीमाएँ भी थीं। मसलन, इनमें जगह-जगह राष्ट्रवादी अभिव्यक्ति के साथ-साथ पुनरुत्थानवादी स्वर भी दिखाई पड़ता है। यही नहीं इनमें कहीं-कहीं जाति-व्यवस्था से जुड़े पूर्वाग्रह भी देखने को मिलते हैं। इन सीमाओं के बावजूद अंग्रेज़ी राज द्वारा प्रतिबंधित कर दी गई ये पुस्तिकाएँ निश्चय ही भोजपुरी भाषी क्षेत्र में कभी राष्ट्रीय चेतना की वाहक रही थीं, इसमें कोई संदेह नहीं।

एन. जेराल्ड बैरियर, बैंड : कंट्रोवर्सियल लिटरेचर एंड पॉलिटिकल कंट्रोल इन ब्रिटिश इंडिया, 1907-1947

(कोलम्बिया : यूनिवर्सिटी ऑफ़ मिसौरी प्रेस, 1974).

ग्राहम शॉ व मैरी लॉयड (संपा.), पब्लिकेशंस प्रोसक्राइब्ड बाइ द गवर्नमेंट ऑफ़ इंडिया (लंदन : ब्रिटिश लाइब्रेरी, 1985).

दुर्गाशंकर प्रसाद सिंह, भोजपुरी के कवि और काव्य (पटना : बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद, 1958).

देविका सेठी, वार ओवर वर्ड्स : सेंसरशिप इन इंडिया, 1930-1960 (नई दिल्ली : कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस, 2019).

नरेन्द्र शुक्ल, ब्रिटिश राज और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता : औपनिवेशिक भारत में प्रतिबंधित साहित्य 1907-1935 (नई दिल्ली : वाणी प्रकाशन, 2017)

बिपन चंद्र, द राइज एंड ग्रोथ ऑफ़ इकनॉमिक नैशनलिज़्म इन इंडिया (नई दिल्ली : पीपल्स पब्लिशिंग हाउस, 1966).

सी.ए. बेइली, एंपायर एंड इन्फ़ॉर्मेशन : इंटेलिजेंस गैदरिंग एंड सोशल कम्युनिकेशन इन इंडिया, 1780-1870, (कैम्ब्रिज : कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस, 1996).

